P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-IV* ISSUE-IV*December-2016
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

अभिराज राजेन्द्रमिश्रकृत कथाकाव्य का दार्शनिक पक्ष

अशोक कंवर शेखावत
व्याख्याता,
संस्कृत विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
झालावाड़, राजस्थान

सारांश

लौकिक एवं पारलौकिक सत्यों के प्रति दृष्टिकोण ही दर्शन है। जीवन–मृत्यु, सुख–दुःख, लोक–परलोक, सम्पत्ति–विपत्ति, जय–पराजय आदि सांसारिक परिस्थितियों में संयम के साथ स्थिर रहना तथा उन परिस्थितियों से पार पाना मनुष्य का सदैव से ही लक्ष्य रहा है। इस लक्ष्य को पाने तथा समस्त सांसारिक दुःखों तथा जन्म–मरण के आवागमन से मुक्ति के प्रयास में जिस ज्ञानसंसार का उद्भव हुआ, उसे दर्शन कहा जा सकता है।

मुख्य शब्द : प्रैति, युनक्ति, विपर्ययैः, भीमवात्या, अद्वैत, आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक, मोक्ष, परावरे, भिद्यते, अचितिः, प्रयोता, लिप्यते।

प्रस्तावना

प्रत्येक समाज की संसार, आत्मा–परमात्मा, सुख–दुःख, जीवन–मृत्यु आदि को लेकर एक निश्चित विचारधारा अथवा दृष्टि होती है। इन्हीं धारणाओं अथवा दृष्टिकोण को उस समाज का दर्शन कहा जाता है। सामाजिक दृष्टिकोण ही दर्शन है। जिस दृष्टिकोण से इस संसार के समस्त पदार्थों का याथातथ्य निरीक्षण, परीक्षण तथा समीक्षण किया जाये, वह दर्शन है। इस प्रकार सम्पूर्ण आध्यात्मिक एवं आधिभौतिक विवेचन, दर्शन की श्रेणी में रखा जा सकता है। यह संसार क्या है? इसकी उत्पत्ति कैसे हुई? मृत्यु के बाद एवं जन्म के पूर्व का सत्य क्या है? मानव जीवन का लक्ष्य क्या है? परम सत्य क्या है? उसकी प्राप्ति का उपाय क्या है? मोक्ष क्या है? दुःख क्यों है? दुःख मुक्ति का स्थायी उपाय क्या है? आत्मा का स्वरूप क्या है? सृष्टि एवं जीवन का कर्ता कौन है? जीवन का कर्तव्य क्या है? जीवन का पाथेय क्या है? इन सभी जिज्ञासाओं का तात्त्विक चिन्तन एवं समाधान ही दर्शन है। जैसा की कहा गया है

'केनेषितं पतति प्रेषितं मनः केन प्राणः प्रथमः प्रैति युक्तः
केनेषितां वाचमिमां वदन्ति, चक्षुः श्रोत्रं क उ देवो युनक्ति।'[1]

'प्रेक्षणार्थक दृश धातु से ल्युट् प्रत्यय भाव अथवा करण अथवा अधिकरण अर्थ में लगकर दर्शन शब्द निष्पन्न होता है।'[2] दर्शन शब्द अपने व्यापक अर्थ में देखना, वह साधन जिससे किसी विषय अथवा वस्तु को देखा जाए अथवा वह आधारभूत वस्तु जिसमें किसी को देखा जाए आदि अर्थों को प्रतिपादित करता है। अतः जीव व जगत को देखने के दृष्टिकोण को दर्शन एवं इस दृष्टिकोण को सप्रमाण प्रतिपादित करने वाले ग्रंथों को दार्शनिक ग्रंथ कहा जाता है।

समकालीन समाज के एक समृद्ध कवि के रुप में अभिराज राजेन्द्रमिश्र भारतीय दर्शनशास्त्र में पारंगत है। चूंकि कथाओं का मूल मन्तव्य कल्पनामिश्रित रोचकता एवं चमत्कार के साथ हृदयपट खोलकर, उसमें करणीय कार्यों के संदेश को सहज रुप से अधिगम करवा देना होता है। अतः सीधे–सीधे दार्शनिक तत्त्वों का विवेचन प्रविष्ट होना थोड़ा मुश्किल है, परन्तु फिर भी कथाओं के ताने–बाने में यथाअवसर उनके दर्शनज्ञान की झलक मिलती है।'अनाख्याता बाणभट्टाऽत्मकथा' में प्रत्यक्ष रुप से बौद्ध दर्शन (नास्तिक दर्शन) का खण्डन करके वेदों (आस्तिक दर्शन) की सार्थकता एवं महत्ता को प्रतिपादित किया गया है। वहां कवि का दार्शनिक ज्ञान प्रबलता के साथ दृष्टिगोचर होता है।

दार्शनिक ज्ञान के संदर्भ में कवि के जीवनदर्शन को भी सम्मिलित किया जाना समीचीन प्रतीत होता है। उनके जीवन दर्शन से तात्पर्य है, जीवन के प्रति कवि का अपना दर्शन क्या है? उनके जीवन मूल्य अथवा नैतिकता के सिद्धान्त क्या हैं? उसका विवेचन दार्शनिक ज्ञान में अन्तर्निहित करने का प्रयास किया है क्योंकि तर्क, बुद्धि, अधिगम, समझ को ही दर्शन के विविध प्रकारों के रुप में स्वीकार किया जाना चाहिए। आगस्ट विलियम हेमर एवं जुलियस चार्ल्स हेमर ने दर्शन को परिभाषित करते हुए कहा है ।

'Philosphy Is Love of Wisdom,
Religion Is Wisdom of Love'[3]

कहा जा सकता है कि जीवन के विविध पहलुओं पर हमारा जो दृष्टिकोण है, वही स्थापित होने पर दर्शन कहलाता है। अतः मैंने दार्शनिक ज्ञान के प्रकोष्ठ में भारतीय दर्शनों में स्थापित आस्तिक एवं नास्तिक दर्शनों के अतिरिक्त कवि के जीवन दर्शन को भी विवेचित किया है।

जीवन की नश्वरता अथवा क्षणभंगुरता को संकेतित करते हुए कवि कहते हैं कि यह जीवन यात्रा अनिश्चित है। लोग साथ चलते हैं, बिछड़ जाते हैं, परन्तु फिर भी जीवन अनवरत चलता रहता है– 'अनिश्चितेयं जीवनयात्रा। कतिपये जना युगपत प्रतिष्ठन्ते। परन्तु मध्येमार्गं कस्य श्वासतन्तुः कुत्र त्रुटिष्यतीति को वेत्ति? तथापि सहयायिमोहात् यात्रा न खलीक्रियते साधकेन। यावत्पथान्तं तु चलितव्यमेव।'[4]

भारतीय दर्शन में पुनर्जन्म, संस्कार एवं पाप–पुण्यों की परिकल्पना प्रमुखता से वर्णित है। चार्वाक दर्शन को छोड़कर सभी दर्शन पुनर्जन्म के लिए कर्म फल को, आसक्ति को व माया को आधार मानते हैं। कर्म, कर्मफल में आसक्ति एवं फल की प्राप्ति के क्रम को परिवर्तित कर निष्काम कर्म को ही भारतीय दार्शनिक परम्परा में मोक्ष का मार्ग बताया गया है। इक्षुगन्धा कथा में बिट्टी एवं उसके पति की बेमेल जोड़ी की विडम्बना पर चर्चा करते हुए नायक कहता है कि सृष्टि में ऐसी विपर्ययावस्था दिखाई देती है। वस्तुतः यह सब कर्मों का फल है, जो हमें सुख या दुःख के रुप में मिलता है– 'इदृशैरेव विपर्ययैः सृष्टिः प्रवर्तते। सर्वेऽपि प्राणिनः पूर्वजन्मार्जितान्येव पापपुण्यानि भंजन्ति। सुखस्य दुःखस्य वा न कोऽपि दातेति मयाऽधीतं।'[5]

ब्रह्म अर्थात् परम सत्य पर, मिथ्या जगत का आवरण है और वह आवरण ब्रह्म की अनुभूति में बाधक है। जब ज्ञान के प्रकाश से अज्ञान का नाश होता है, तो सत्य हमारे समक्ष शाश्वत स्वरुप में भासित हो उठता है। इसी तथ्य को उद्घाटित करते हुए कहा है– 'न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकाः नेमाः विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः। तमेव भान्तमनुभाति सर्वे तस्य भाषा सर्वमिदं विभाति।'[6] ज्ञान के प्रकाश में ब्रह्म स्वयं भासित होता है।

सिंहसारिः की नायिका की सपत्नी रूपी विपत्ति के आने पर कहते हैं– 'अकस्मादेव दिदिशाजीवनाकाशे भीष्मभीष्मं समुहद् वात्याचक्रं समुत्थितम्, सर्वमपि येन विसंवादि जातम्। उन्मूलिता आशा प्ररोहाः धूलिधूसरितानि स्वप्नकुसुमानि संचूर्णिता सौभाग्यत्रियामाव्रततिः विरुपिताश्च मनोरथालवालाः।'[7] यवद्वीप की बदलती हुई परिस्थिति की परिवर्तनशीलता को कवि इन शब्दों में वर्णित करते हैं– 'परन्तु सर्वाणि दिनानि समंजासान्येव नातियान्ति। शान्तेऽपि उपवने वात्येव वात्या। शान्तेऽपि जलधौ समुत्तिष्ठत्येव जलोत्प्लवः। शान्तेऽपि भूतले समुज्जृम्भत एव भूकम्पः।'[8]

सुख एवं दुःख जीवन रुपी सिक्के दो पहलू हैं। जीवन चक्र निरन्तर गतिशील है। मनुष्य की अवस्था प्रतिक्षण परिवर्तनशील है। समय का रथ सतत अग्रसर हो रहा है। जीवन की इसी परिवर्तनशीलता, गतिशीलता एवं प्रतिकूलता को दर्शाते हुए कुक्की कथा में कहते हैं 'समययानं क्रमेण पुरस्ससार। तच्चक्रेऽपि पर्यायैरुच्चैर्नीचैश्च गच्छती तस्मै गतिं ददतुः। परन्तु सर्वोऽपि कालोऽनुकूलो न व्यत्येति। कदाचिदायाति वासन्तीनिशा रसालमंजरी मधुपरिमलभारभंगुरा कदाचिच्चोत्तिष्ठति न्यग्रोधप्लक्ष पर्कट्युन्मूलनक्षमाधूलिघनबिम्बप्रोद्धुरा भीमवात्या।'[9] पुनर्नवा में वे कहते हैं–'अलमसहाय इव विवश इव, हतभाग्य इवात्मानं विनिन्द्य, नैराश्य सागरे वा निपात्य।'[10]

भारतीय जीवन दर्शन में धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष रुपी पुरुषार्थ चतुष्ट्य को प्राप्त करने हेतु जीवन को ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यासाश्रम में कर्मों के आधार पर विभाजित किया है। इसकी वर्णव्यवस्था का आधार कर्म है न कि जाति। इसी का समर्थन करते हुए वे कहते हैं 'नाहं नास्तिको न वा परम्परा विरोधी। परन्तु परम्पराया अन्धानुकरणमपि न मह्यं मनागपि रोचते। गुणकर्मार्जितवैशिष्ट्य एव मम दृढ़ो विश्वासो न पुनर्जातिमात्रायत्ते वृथाऽभिजात्याभिधाने।'[11]

सौभाग्य एवं दुर्भाग्य के लिए, पुनर्जन्म एवं मोक्ष के लिए, भारतीय दार्शनिक परम्परा में कर्म को ही मुख्य सूत्रधार स्वीकार किया गया है। अभिराज राजेन्द्रमिश्र की कथाओं में अनेकशः इस कर्म प्रधानता का समर्थन किया गया है। पुनर्नवा में वे कहते हैं–'.... कर्मविपाकरहस्यं को नु जानाति? परन्तु निश्चितमिदं यत्प्रत्येकं घटनायाः सूत्रं तेनैव नियन्त्रितम्। इदमपि सुनिश्चितं यन्न किमपि निष्प्रयोजनं घटते। केन दुःखेन किं सुखं समुत्पद्यते कस्य वा दुःखेन कस्याऽन्यस्य सुखं विधीयते इति परमेश्वरः प्रागेव जानाति। घटिते सति लोकोऽपि जानीते। विचित्रं विस्मयावहंच नियतिजनितं घटनाचक्रम्।'[12]

'अनाख्याता– बाणभट्टाऽत्मकथा'' में कवि ने स्पष्ट रुप से वेदत्रयी एवं ब्राह्मण धर्म के प्रति दृढ़ आस्था प्रकट की है। वहां वे वेदनिंदक एवं पलायन का रास्ता बताने वाले बौद्ध धर्म का तार्किकता के साथ खंडन करते हैं तथा वेद, उपनिषद व ब्राह्मण ग्रंथों में निहित कर्म विज्ञान के दृष्टिकोण को प्रतिपादित करते हैं। संसार में सारे दर्शनों की उत्पत्ति का मूल उद्देश्य आधिभौतिक, आध्यात्मिक एवं आधिदैविक दुःखों से निवारण एवं मोक्ष प्राप्ति है। अद्वैत के प्रतिपादक शंकराचार्य यह स्वीकार नहीं करते कि कर्म से मुक्ति हो सकती है। वस्तुतः कर्म का आधार अनात्मा में आत्मा और आत्मा में अनात्मा का अभ्यास है, यही मोक्ष का बाधक एवं बंधन का कारक है। भारतीय दर्शनों में जीवन को दुःखात्मक नहीं, बल्कि आसक्ति को दुःखात्मक माना है। यदि आसक्ति रहित कर्म किया जाए तो आनन्द हीं आनन्द है। भोगों की क्षणभंगुरता, विषयों की दुःखात्मकता एवं भौतिक जीवन की नश्वरता प्रतिपादित करके भारतीय दर्शन, मोह के बंधन से मुक्त कर परमानंद का मार्ग प्रदर्शित करता है। स्थायी सुख का रास्ता बताने वाला भारतीय दर्शन निराशावादी अथवा पलायनवादी कैसे हो सकता है? भारतीय दर्शन में कर्म ही बंधन एवं कर्म ही मुक्ति का माध्यम है। श्रीमद्भगवद्गीता में भी श्रीकृष्ण ने कहा है

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सौऽस्त्वकर्मणि।।'[13]

उपनिषदों में भी कहा गया है कि विज्ञान के द्वारा सत्य का साक्षात्कार होने पर कर्मबंधन क्षीण हो जाते है। यहां ज्ञान को ही मुक्ति का उपाय बताया गया है–

'भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।।'[14]

अपि च–'प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात्।'[15]

वेदों में कर्मवाद के विषय में मतभेद होने पर भी दृष्टान्तों से यह प्रमाणित है कि वेदों में कर्म की महत्ता प्रतिपादित है। देवताओं के विशेषण 'शुभस्पतिः, पिपस्पतिः, विश्वचर्षणिः' सिद्ध करते हैं कि कर्मो का वेदों में भी महत्त्व प्रतिपादित हैं। ऋग्वेद में शुभाशुभ कर्मो के परिणामों का संकेत दिया गया है

'न स स्वो दक्षो वरूण द्युतिः सा सुरा
मन्युर्विभीदको अचित्तिः।
अस्ति ज्यायान्कनीयस उपार
स्वप्नश्चनेदनृतस्य प्रयोता।।'[16]

वेद, उपनिषद्, भगवद्गीता, आदि पौराणिक दार्शनिक ग्रन्थों में शुभकर्म की महत्ता प्रतिपादित की गई है, परन्तु संसार से पलायन का समर्थन कहीं भी नही किया गया है। वैदिक कर्मकाण्ड एवं दर्शन की गहराई तथा उसकी वैज्ञानिकता को परखे बिना, जो सांसारिक पलायन का रास्ता बुद्ध ने दिखाया उसका कविवर दृढ़ता से विरोध करते है– 'संसारं परित्यज्य संसारस्य रक्षा? समरं विहाय समरविजयः? दायित्वं विहाय दायित्वपूर्तिः?'[17]

वन मे रहकर जिन चार आर्यसत्यों की खोज का दावा बुद्ध कर रहे हैं, उन चार आर्यसत्यों का प्रतिपादन वेद–पुराणों में किया जा चुका है। सांख्यदर्शन में तापत्रयनिवारण, वेदान्त में अज्ञाननिवृत्ति एवं दुःखमुक्ति के उपाय पौराणिक ग्रन्थों में वर्णित हैं। उपनिषदों में उद्घोष किया गया है

'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समा'।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।'[18]

कवि वेदों में आस्था रखने वाले आस्तिक है तथा कर्म का पुरजोर समर्थन करते है। वे कहते हैं– 'धिक्तं धर्मं, धिग्धिक्तं सम्प्रदायं यस्समाजं क्लीबं विदधाति यो लोकं कर्मपराङ्मुखं कुरूते..... कर्मकमयीयं सृष्टिः।..... सूर्यस्तपति प्रतिक्षणं, चन्द्र आह्लादयति प्रतिक्षणम्। अग्निर्ज्वलत्यहोरात्रम्। प्रवहति वातस्सततमेव।..... इदमेव सृष्टिरहस्यम्। इदमेव यज्ञरहस्यम्।'[19]

शोध के उद्देश्य

दर्शनशास्त्र भारतीय ज्ञानसंसार के यद्यपि अमूल्य ग्रन्थरत्न हैं, तथापि अपनी जटिलता एंव सूक्ष्मता के कारण सामान्य बुद्वि से सहज ग्राह्म नहीं हैं। कथाएं अपनी रोचकता एंव सरसता के कारण मानवमन को सहज आकृष्ट करती है। जो ज्ञान शास्त्रीय ग्रन्थ तर्क–वितर्क से ह्रदयंगम नहीं करवा पाते, उसे कथाएं सहज ही ह्रदय में प्रविष्ट करवा देती हैं। अतः मुझे समीचीन लगा कि कथा–साहित्य में दार्शनिक सूत्र खोजना अत्यन्त रोचक एंव साहित्यानुरागी जनों के लिए पाथेय सिद्ध होगा। इसीलिए कथाओं में दार्शनिक मुक्तको का शोध किया गया। आधुनिक युगप्रणेता अभिराज राजेन्द्रमिश्र का स्पर्श पाकर कंचनतुल्य परीक्षित कथाओं में यह विषय और भी गौरवान्वित हो गया हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार कहा जा सकता है कि यद्यपि कथाओं में गूढ़ दार्शनिक सिद्धांतों का प्रत्यक्ष विवेचन स्थान नहीं बना सकता, परन्तु उपदेशात्मक कथा–संदेशों के ब्याज से कविवर ने अपने दार्शनिकज्ञान–मुक्तकों को पिरोकर कथाओं को शिरोधार्य बनाने का कोई अवसर चूका नहीं है। भारतीय पौराणिक शास्त्रों यथा वेदों, उपनिषदों, पुराणों, गीतादि तथा प्रत्यक्ष दार्शनिक ग्रन्थों में वर्णित दार्शनिक सिद्धांतों जैसे– कर्म, कर्मविपाक, पुनर्जन्म, सांसरिक नश्वरता, पाप–पुण्य, सुख–दुख, सांसारिक परिवर्तनशीलता आदि तत्त्वों का यथावसर सम्यक विवेचन करते हुए पुरुषार्थ एवं आशावाद का मार्ग प्रशस्त कर जीवनमूल्यों का बहुमूल्य सम्मिश्रण किया है। 'पुराणमित्येव न साधु सर्वम्' कहते हुए उन्होनें समयानुकूल नूतन जीवनादर्शों को अपनाते हुए कल्याणकारी भविष्य का आधार प्रस्तुत किया है। कवि का गहन दार्शनिक चिन्तन उनकी कथाओं के उपदेश को प्रामाणिकता प्रदान करता है। जो नैतिक संदेश पाण्डित्य प्रदर्शन करते, जटिल दार्शनिक ग्रन्थ तर्क, बुद्धि, प्रमाणों एवं प्रमेयों के साथ विस्तार से प्रतिपादित करते है, उसी नैतिक संदेश को उनकी कथायें सहज, सरल, रोचक एवं संवेदनशीलता के साथ बलात् ह्रदयंगम करवा देती हैं। दुःखमुक्ति एवं सुख प्राप्ति के लक्ष्य को कथायें सहज सुलभ करवाती हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. केनोपनिषद्, 1/1
2. वामनशिवराम आप्टे, संस्कृतहिन्दी शब्दकोष, पृष्ठ–450
3. डॉ. कृष्णाकांत पाठक, धर्म–दर्शन, पृष्ठ–32
4. अभिराजराजेन्द्रमिश्र, इक्षुगन्धा, पृष्ठ–22
5. वही, वही, पृष्ठ–45
6. श्वेताश्वतरोपनिषद्, 6/14
7. अभिराजराजेन्द्रमिश्र, रांगडा, पृष्ठ–88
8. वही, वही, पृष्ठ–94
9. वही, वही, पृष्ठ–21
10. वही, पुनर्नवा, पृष्ठ–129
11. वही, रांगडा, पृष्ठ–31
12. वही, पुनर्नवा, पृष्ठ–128
13. श्रीमद्भगवतगीता, 2/47
14. मुण्डकोपनिषद, 2/2/8
15. कठोपनिषद्, 1/2/23
16. ऋग्वेद, 7/86/6
17. अभिराजराजेन्द्रमिश्र, पुनर्नवा, पृष्ठ–134
18. यजुर्वेद, 40/2